ISSN : 2321-5569
राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर

मधुमती

वर्ष 61, अंक 11, नवम्बर, 2021

मूल्य ₹ बीस

ISSN 2321-5569

मधुमती

वर्ष 61, अंक 11, नवम्बर, 2021

UGC Care list Group 'D' Sl.No. 57

प्रधान सम्पादक
राजेन्द्र भट्ट
आई.ए.एस.

सम्पादक
ब्रजरतन जोशी

www.rsaudr.org
email : madhumati.udaipur@gmail.com

मधुमती

वर्ष 61, अंक 11, नवम्बर, 2021

UGC Care list Group 'D' Sl. No. 57

प्रधान सम्पादक
राजेन्द्र भट्ट
आई.ए.एस.

सम्पादक
ब्रजरतन जोशी

प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. बसन्त सिंह सोलंकी

प्रबन्ध सहयोग
राजेश मेहता

आवरण एवं रेखांकन
किशनकुमार **व्यास**

अंक का मूल्य : 20/-
वार्षिक शुल्क : 240/-

(वार्षिक शुल्क धनादेश, बैंक ड्राफ्ट, एटपार चैक या नकद एवं ऑनलाइन हस्तान्तरण की व्यवस्था है। सचिव, राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर के नाम से ही भेजें)

प्रकाशक
सचिव, राजस्थान साहित्य अकादमी,
सेक्टर-4, हिरण मगरी, उदयपुर (राज.) - 313 002
दूरभाष : 0294-2461717

मुद्रक
न्यूट्रेक ऑफसेट प्रिन्टर्स,
13, भोपा मगरी, न्यूजट्रेक नगर, हिरण मगरी,
सेक्टर-3, उदयपुर - 313 002

- : मधुमती के फेसबुक पेज से जुड़ें : -

https : www.facebook.commadhumatihindi

मधुमती में प्रकाशित रचनाओं का सर्वाधिकार रचनाकारों के पास है। मधुमती में प्रकाशित लेखों/रचनाओं में व्यक्त विचार/ तथ्य लेखकों द्वारा प्रस्तुत हैं। मधुमती में प्रकाशित रचनाओं के लिए राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर का सहमत होना आवश्यक नहीं है और न ही अकादमी इसके लिए उत्तरदायी है।

क्रम

संपादक की बात 7

विशेष स्मरण

विश्व वैचारिकी और कवि-चिंतक कैलाश वाजपेयी
ओम निश्चल 11

लेख

नेहरू क्यों ?
पुरुषोत्तम अग्रवाल 19

अब्दुलरज़ाक गुरनाह को नोबेल के मायने
आदित्य कुमार गिरि 35

स्त्रीभक्त कवियित्रियों में अस्मिता के बहुआयामी स्वर
सुधा निकेतन रंजनी 41

गोविन्द मिश्र के उपन्यास साहित्य में परिवार
लक्ष्मी चौधरी 47

मनोविज्ञान के आईने में कामायनी और अग्निसागर
एजाज अहमद 56

निर्मल वर्मा का सांस्कृतिक चिंतन
मुकेश सैनी 65

आत्मकथ्य

अधूरी यात्रा का पूरा जीवन
कमलकिशोर गोयनका 70

डायरी

बालकनी डायरी नन्हा गुरु
श्रद्धा थवाईत 80

संस्मरण

जयशंकर मिल जाएँ,तो मैसम बदल जाए
ओम शर्मा 84

दियारा की कहानी आजी की जुबानी
आशालता सिंह 94

उपन्यास अंश

बाकी वार्ता फिर कभी
अम्बर पाण्डे 106

अनुवाद

लँगड़ी संवेदना
मूल कहानीकार : रामस्वरूप किसान
राजस्थानी से अनुवाद : चेतन स्वामी 118

स्त्री भक्त कवयित्रियों में अस्मिता के बहुआयामी स्वर

सुधा निकेतन रंजनी

भक्तिकाल के महत्त्व को साहित्येतिहासकारों ने अनेकानेक विशेषणों से रेखांकित किया है। जिससे यह सिद्ध होता है कि इस काल में अद्भुत साहित्य की रचना हुई है। जो राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आधारों पर मध्यकाल को एक विशिष्ट पहचान दिलाती है।

भक्तिकाल को दी गयी यह विशिष्ट पहचान तब पक्षपातपूर्ण प्रतीत होने लगती हैं जब हम पाते हैं कि स्त्रियों के योगदान को कहीं महत्त्व नहीं दिया गया और अगर बात होती भी है, तो बस एक-दो स्त्री भक्त कवयित्रियों का नाम भर ले लिया जाता है।

> *भक्तिकाल के अन्य रचनाकारों की तरह ही स्त्री भक्त रचनाकार भी भक्ति और कविता को आत्माभिव्यक्ति का साधन बनाती हैं। इस प्रकार से वे साहित्य में अपनी चेतना के साथ ही समाज, संस्कार और भाषा के भण्डार में भी अपना योगदीन देती हैं।*

समाज का निर्माण स्त्री और पुरूष दोनों से होता है। जब साहित्य में भी दोनों की भागीदारी हो, तब उस काल के साहित्य की सुन्दरता और पूर्णता निर्धारित होती है और तभी उस युग को या साहित्य को श्रेष्ठ या स्वर्ण-युग से नवाजे जाने की बात भी सार्थक लगती है।

भक्ति आंदोलन की बात करें, तो यहाँ भक्ति को धर्म, लिंग एवं जाति के बंधन से मुक्त माना गया है। के. दामोदरन ने इस बात का उल्लेख किया है कि *यह आंदोलन विभिन्न रूपों में प्रकट हुआ। किंतु कुछ मूलभूत सिद्धांत ऐसे थे जो समग्र रूप से पूरे आंदोलन पर लागू होते थे- पहले, धार्मिक विचारों के बावजूद जनता की एकता को स्वीकार करना, दूसरे, ईश्वर के सामने सबकी समानता, तीसरे, जाति प्रथा का विरोध, चौथे, यह विश्वास कि मनुष्य और ईश्वर के बीच तादात्म्य प्रत्येक मनुष्य के सद्‌गुणों पर निर्भर करता है न कि ऊँची जाति अथवा धन संपत्ति पर, पाँचवें, इस विचार पर जोर कि भक्ति ही अराधना का उच्चतम स्वरूप है, और अंत में कर्मकाण्डों, मूर्तिपूजा, तीर्थाटनों और अपने को दी जाने वाली यंत्रणाओं की निंदा। भक्ति आंदोलन मनुष्य की सत्ता को सर्वश्रेष्ठ मानता था और सभी वर्गगत एवं जातिगत भेदभावों तथा धर्म के नाम पर किए जाने वाले सामाजिक उत्पीड़न का विरोध करता था।*[1]

इन विशेषताओं के कारण ही भक्ति साहित्य जिसे समय की दृष्टि से मध्ययुग माना जाता है उसमें स्त्रियों की उपस्थिति दिखाई देती है, किन्तु स्त्री पक्ष भक्ति साहित्य में द्वंद्व का विषय रहा है। भक्त कवियों ने पूज्य स्त्री पात्रों की महिमा का बखान तो किया है, किन्तु सामान्य स्त्री जाति के प्रति उनके विचार पितृसत्ता समाज से अनुकूलित आम पुरुषों जैसे ही हैं। कबीर, तुलसी, चैतन्य आदि को भी इन आरोपों से बरी नहीं किया जा सकता है। अक्क महादेवी, अंदाल गोदा, ललद्यद और मीरां आदि भक्त कवयित्रियों में स्त्री- चेतना की अनुगूँज विलक्षण है।

दरअसल, भारतीय समाज पुरूषवादी प्रधान समाज रहा है। जहाँ स्त्री की भूमिका को महत्त्व नहीं दिया गया। साहित्य के इतिहासकारों ने भी अपने इतिहासग्रंथ में पुरूष रचित साहित्य के मूल्यांकन पर ही अधिक जोर दिया है। इसके कारण को गौर करते हुए जगदीश्वर चतुर्वेदी ने सही कहा है कि *इतिहासकारों और आलोचकों के पुरूषवादी नजरिये और पितृसत्तात्मक वर्चस्व ने स्त्री साहित्य को साहित्य के केन्द्र में आने नहीं दिया।*[2] इसमें कोई संदेह नहीं कि पुरूषवादी सामंती विचारधारा के कारण स्त्रियों से भेदभाव किया गया और उन्हें उचित अधिकार नहीं मिल पाया।

मध्यकालीन संतों की चिंता में सबसे ऊपर भेदभाव है। वे मानव-एकता की बात करते हैं। वे संकुचित विचारों से सर्वथा मुक्त दिखाई देते हैं। वे एक जीवन्त और स्वस्थ समाज की परिकल्पना करते है, जहाँ सब बराबर हों, किसी का दमन न हो, किसी को सताया न जाए, जहाँ पाखण्ड और आडम्बर नहीं हो, जहाँ सब मनुष्यता की सामान्य भावभूमि पर मिल कर प्रेम से रह सकें, लेकिन मध्यकालीन संत कवियों का नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण हमेशा से विवादास्पद रहा है। इन पर यह आरोप लगाया जाता है कि ये नारी निन्दक थे।

हिंदी साहित्य में मुख्य धारा के कवियों से हटकर अगर हम देखें, तो दरिया साहब (मारवाड़) सरीखे कुछ संत कवि हमें ऐसे मिलते हैं जो न केवल जाति और धर्मों के आधार पर होने वाले भेद-भाव के खिलाफ हैं, बल्कि लिंग के आधार पर भी होने वाले भेद-भाव के खिलाफ खड़े दिखाई देते हैं। दरिया साहब कहते हैं-

कहे दरिया चित चेतिये, सतगुरु कहा विचारि।
शीतल चरण सरोज रज, भक्ति करहिं नर नारि॥

(ग्यान दीपक)

दरिया साहब पुरूषों के साथ ही स्त्रियों के भक्ति करने की बात करते हैं। उस समय और समाज के लिए यह एक नई और महत्त्वपूर्ण बात है। दरिया साहब के स्त्री संबंधी दृष्टिकोण अन्य मध्यकालीन संतों से अलग हैं। वे स्त्री को समाज के लिए वर्जित या साधना में बाधक कहते नजर नहीं आते। बल्कि उन्होंने समाज में स्त्री पुरूष दोनों की सहभागिता, सहविचार और समानता की बात कही है। यह विचार मध्यकालीन जड़ता की नहीं, बल्कि आधुनिकता की मूलभूत ईकाई में से एक है।

नारी पुरूष जो एक मत होई।
जुग जुग राज करेगा सोई॥

(ग्यान दीपक)

दरिया साहब के समय और समाज में स्त्री भोग-विलास की वस्तु समझी जाती थी। धर्म भी स्त्री को प्रताड़ित करने में पीछे नहीं था। यहाँ तक कि दरिया साहब के पूर्ववर्ती भक्त कवि कबीरदास, रैदास, तुलसीदास आदि के यहाँ भी स्त्रियों के प्रति अच्छी धारणा नहीं दिखाई देती। कबीर की ऐसी कई साखियाँ हैं जिसमें नारी को साधना में बाधा माना गया है और कबीर साधक को नारी से बचने की चेतावनी देते हैं। कबीर को लगता है कि नारी के छायामात्र से भुजंग अंधा हो जाता है, तो वहीं तुलसीदास स्त्रियों को गँवार और पशु की श्रेणी में रखते हैं। इस आधार पर देखें, तो दरिया साहब समदर्शी थे, वे समाज में स्त्री पुरूष, अमीर-गरीब, सबल-दुर्बल सभी को समान दृष्टि से देखना पसंद करते थे। दरिया साहब की भक्ति में कहीं भी नारी को बाधक नहीं माना गया है इसलिए उनकी विचारधारा नर-नारी दोनों को भक्ति करने की इजाजत देती है और भक्ति के क्षेत्र में विशिष्ट स्त्रियों को ही माना गया है।

पुरूश ज्ञान भक्ति है नारी,
ज्ञान-भक्ति बीच नहीं डारी॥
पहिले भक्ति तब होखे ज्ञाना,
पहिले सत तब पुरूश अमाना॥

(ग्यान दीपक)

दरिया साहब के पद को अगर देखें, तो उनके पद में स्त्री को जगत की जननी माना गया है और ऐसा प्रतीत होता है कि अपने समय के स्त्री संबंधी विचारों पर पुरूषों को धिक्कारते नजर आते हैं।

नारी जननी जगत की, पाल पोष दे पोष।
मूरख राम बिसारि कै, ताहि लगावै दोष॥
नारी आवै प्रीतिकर, सतगुरु परसे आण।
जन दरिया उपदेस दै, मांय बहन घी जाण॥
(उपदेश का अंग-32)

भक्तिकाल के अन्य रचनाकारों की तरह ही स्त्री भक्त रचनाकार भी भक्ति और कविता को आत्माभिव्यक्ति का साधन बनाती हैं। इस प्रकार से वे साहित्य में अपनी चेतना के साथ ही समाज, संस्कार और भाषा के भण्डार में भी अपना योगदीन देती हैं। *हिंदी साहित्य के इतिहास का जिन लोगों ने अध्ययन किया है, उन्हें भलीभाँति ज्ञात है कि पुरुष कवियों की भाँति स्त्री कवयित्रियों ने भी भाषा के भंडार की पूर्ति करने में वास्तविक और बहुत कुछ प्रयत्न किया है। तुलसी, बिहारी, देव, पद्माकर आदि का नाम प्राचीन साहित्य के उद्धारकों में लिया जाता है, तो मीरांबाई, सहजोबाई, दयाबाई और सुंदर कुँवरि बाई आदि ने उसके उद्धार का कम प्रयत्न नहीं किया है।*[3]

प्रारंभ करते हैं बौद्ध साहित्य से जहाँ *थेरीगाथा* में बौद्ध-भिक्षुणियों की स्वतंत्र उपस्थिति दर्ज है। जिसमें स्त्रियों ने आध्यात्मिकता के साथ अपनी रोजमर्रा की जिन्दगी को अभिव्यक्ति दी हैं। इसके साथ ही इसमें विद्रोह की भावना और मुक्ति की कामना भी की गई है।

अहो मैं मुक्त नारी/ मेरी मुक्ति धन्य है।
पहले मैं मूसल ले धान कूटा करती,
आज उससे मुक्त हुई
गया मेरा निर्लज्ज पति जो मुझे
उन छातों से भी तुच्छ समझता था जिन्हें वह
अपनी जीविका के लिए बनाता था।[4] -
- सुमंगला माता

यहाँ सुमंगला माता ने अपनी मुक्ति को धन्य माना है क्योंकि जब वो सामान्य स्त्री थीं, तब पति से प्रताड़ना और हीनता उनकी जिन्दगी का हिस्सा था।

बौद्ध भिक्षुणियाँ हों या धार्मिक मठों में रहने वाली साध्वी या फिर महलों में निवास करने वाली महारानी इनका जीवन सामान्य स्त्रियों से भिन्न था।

ये स्त्रियाँ बहुत हद तक सामाजिक परम्पराओं व रूढ़ियों से मुक्त थीं। *सीमोन द बउवार* ने इन विशिष्ट महिलाओं की तुलना सामान्य महिलाओं से करते हुए *द सेकेंड सेक्स* में लिखा है- *यदि स्त्री कॉन्वेंट या धार्मिक मठों में रहती थी, तब भी वह पुरूष से स्वतंत्र होती थी। प्रभु के साथ अपने रहस्यात्मक संबंधों के कारण वह सारी प्रेरणा ग्रहण करके पुरुष के बराबरी का दावा कर सकती थी। उसकी ताकत, उसकी तपस्या, जिसके लिए समाज भी उसे सम्मान देता था। अतः महारानियाँ अपने दैवी अधिकार के कारण तथा साध्वी स्त्रियाँ अपने तपोबल के कारण सामाजिक सम्मान प्राप्त करती थीं। जिससे वे पुरूषों के बराबर खड़ी हो सकती थीं। इसके विपरीत अन्य सभी स्त्रियों की नियति एक होती थी। दमन उनका भाग्य था।*[5]

स्त्री भक्त कवियों के बारे में अधिकांश आलोचकों का यह मानना है कि *वात्सल्य* और *शृंगार* ही इनके लिए सहज है। *क्योंकि ये दोनों तत्त्व स्त्री-हृदय के मुख्य तत्त्व हैं। स्त्री भक्त कवियों का मन रामकाव्य की अपेक्षा कृष्ण काव्य में अधिक रमा है। उन्होंने कृष्ण की बाल लीलाओं और प्रेम लीलाओं को अपने काव्य का केंद्रीय विषय बनाया है।* कुछ विद्वानों को लगता है कि ज्ञान की बातें तो स्त्रियों की बुद्धि से परे हैं। कुछ स्त्री भक्त कवियों की चर्चा यहाँ जायज है।

मीरां से बहुत पहले उमा नाम की भक्त कवयित्री थीं जिन्होंनें न तो राम को अपने काव्य का विषय बनाया और न ही कृष्ण को। उमा के काव्य में ईश्वर के लिए जहाँ *सैंया* या *सद्‌गुरु* का संबोधन मिलता है वहीं अन्य स्त्रियों के लिए *सहेली* शब्द आया है। उमा पुरुषवादी व्यवस्था से भी इनकार करती हैं-

ऐसे फाग खेले राम राय।
सुरत सुहागण सम्मुख आया।।
ओर तत को बाजी है बाजा।
सबै साधौं खेलैं सत फागा।।

स्त्री भक्त कवयित्री पार्वती जिनकी कुछ कविताएँ सेवादास की वाणी नामक संग्रह में संकलित हैं। पार्वती ने सतगुरु को बहुत महत्त्व दिया है किन्तु वे किसी भी ऐरे गैरे को गुरु मानने को तैयार नहीं हैं, बल्कि वे गुरु होने की शर्त रखती हैं

धन जीवन की करै न आस।
चित न राखै कामिनी पास।।
नाद बिंदु जाके घट जरै।
ताकी सेवा पारबती करै।।

रत्नावली को कौन नहीं जानता, ये वही रत्नावली हैं जिनका विवाह तुलसीदास से हुआ और उनका वैवाहिक जीवन अंततः असफल रहा। रत्नावली की रचनाशीलता विविधतापूर्ण, दोषमुक्त एवं नीतिपरक है। उनकी तीन रचनाएँ उपलब्ध हैं

1. मुरलीधर चतुर्वेदी रचित रत्नावली (सन 1872)
2. रत्नावली लघु दोहा संग्रह
3. दोहा रत्नावली

सावित्री सिन्हा ने उनकी काव्य भाषा के बारे में लिखा है कि *उनकी भाषा सरल ब्रजभाषा है, जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग तो है, पर उनका बाहुल्य नहीं है। उर्दू शब्दों का पूर्ण अभाव है। व्याकरण दोष उनकी भाषा में प्रायः नहीं आने पाए हैं। पुनरुक्ति तथा ग्राम्य, अश्लील इत्यादि दोषों का पूर्ण अभाव है।*

स्त्री भक्त कवयित्रियों में दयाबाई और सहजोबाई का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। दोनों ही संत चरणदास की बहन मानी जाती हैं और दोनों के गुरु भी चरणदास ही थे। दोनों ने ही अपनी रचनाओं में गुरु को बहुत सम्मान दिया है। दयाबाई गुरु को ब्रह्मस्वरूप मानती हैं वहीं सहजोबाई गुरु को ब्रह्म से भी बड़ा मानती हैं। सहजोबाई की प्रसिद्ध रचना सहज प्रकाश है, जिसके बारे में उन्होंने लिखा है

गुरु अस्तुति के करन कूं, बाढ़ी अधिक हुलास।
होते होते हो गई पोथी सहज प्रकाश।।

सहज प्रकाश में सहजोबाई स्वयं ज्ञान स्वामिनी के रूप में उपस्थित होती हैं।

मुक्ताबाई हिंदी भाषा की नहीं, मूलतः मराठी भाषा की कवयित्री हैं, किन्तु हिन्दी भाषा में भी इनकी रचनाएँ उपलब्ध हैं। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि *मुक्ताबाई की हिंदी कविता का पाठ आज भी महाराष्ट्र में होता है।*

ललद्यद कश्मीरी भाषा की लोकप्रिय संत कवयित्री हैं। उनके जीवन के बारे में प्रामाणिक जानकारी नहीं मिलती, लेकिन यह कहा जाता है कि अनेक अत्याचार सहती हुई घर गृहस्थी को त्याग कर उन्होंने अपने को शिव भक्ति में विलीन कर दिया।

ललद्यद की काव्य शैली को वाख कहा जाता है। जिस प्रकार कबीर के दोहे, मीरा के पद, तुलसी की चौपाई और रसखान के सवैये प्रसिद्ध हैं। उसी तरह ललद्यद के वाख प्रसिद्ध हैं। अपनी रचनाओं में उन्होंने जाति और धर्म की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर भक्ति को जीवन से जोड़ा। जिसमें धार्मिक आडम्बरों का विरोध किया और प्रेम को सबसे बड़ा मूल्य माना।

हँसता, छींकता, खाँसता, जमहाई लेता
नित्य स्नान तीर्थों पर वही है करता
वर्ष के वर्ष नग्न निर्वसन वह रहता
वह तुम में है, तुम्हारे पास है रहता।

....

मेरे लिए जन्म-मरण है एक समान
न मरेगा कोई मेरे लिए/ और न ही/
मरूँगी मैं किसी के लिए।

भारतीय प्रेमाख्यान परम्परा में कोई महत्त्वपूर्ण कवयित्री नहीं हुई, किन्तु सामान्य सूफी धारा में आयशा

और राबिया (714-801) का स्थान अत्यंत सम्माननीय है। राबिया अत्यंत दरिद्र परिवार से थीं और बचपन में ही उनके माता-पिता गुजर गए थे। उनका सबसे बड़ा क्रांतिकारी कदम यह था उन्होंने वह शादी नहीं कीं। इस्लाम में शादी न करना सबसे बड़ा कुफ्र माना जाता है। राबिया में स्त्री-मुक्ति के आरम्भिक स्वर को देखा जा सकता है। वह अल्लाह को छेड़ने तक से बाज नहीं आतीं हैं-

क्यों अल्लाह को छेड़े न?
क्यों न उनके साथ शरारत करें?
क्यों न समझें उस आजादी को
जिस आजादी में 'वो' है
और जिस आज़ादी में 'वो' हमें
देखना चाहता है।...

चलो ऐसे सज़दा करें कि
सब दीवारें गुम हो जाए
जहाँ मस्ती अपने आप में ऐसे ढले
कि खुदी गुम हो जाए।

राबिया की प्रश्नाकुलता, आज़ादी की चाहत और दीवारों को ख़त्म करने की आकांक्षा सम्पूर्ण सूफ़ी साहित्य में स्त्री-प्रश्न के सन्दर्भ में विरल, गरिमापूर्ण और अनोखा है।[11]

स्त्रियों का संबंध पंथ या गद्दी से भी था यह बात हम कम ही जानते हैं। *बावरी पंथ* का प्रवर्तक बावरी साहिबा को ही माना जाता है।

बावरी साहिबा उच्च कुल की संभ्रांत महिला बताई जातीं हैं, इनका निवास स्थान दिल्ली माना जाता है। इसके अलावा इनके जन्म-मृत्यु के संबंध में कोई सूचना नहीं मिलती। बाबरी पंथ को भुड़कुड़ा पंथ (भुड़कुड़ा की संत परम्परा) के नाम से भी जाना जाता है। इस परम्परा की शुरुआत रामानन्द साहब से मानी जाती है। ये रामानंद कबीर के गुरु रामानन्द से अलग हैं। इस पंथ को बावरी साहिबा के समय से ही प्रसिद्धि मिली होगी जिसके कारण ही विद्वानों ने इन्हें वास्तविक प्रवर्तक मानकर इनके नाम पर ही इस पथं का नाम *बावरी पंथ* रखना उचित समझा हो।

बावरी साहिबा के बारे में चतुर्वेदीजी का अनुमान है कि *इनका आविर्भाव प्रसिद्ध सम्राट अकबर के समय अर्थात् संवत 1599-1662 के लगभग हुआ था। इस प्रकार ये संत दादूदयाल (सं. 1601-1660) की समकालीन थीं।*

बावरी साहिबा की दो सवैया विख्यात हैं। पहला-

बावरी रावरी का कहिए,
मनहवै के पतंग मरै नित भाँवरी।
भाँवरी जानहिं सन्त सुजान,
जिन्हें हरिरूप दिये दरसाव री।
साँवरी सूरत मोहनि मूरत दै
करि ज्ञान अनन्त लखाव री।
खाँवरी सांह तेहारी प्रभु,
गति रावरी देखि भई मति बावरी॥

दूसरा पद महात्माओं की वाणी में प्रकाशित हैं-
अजपा जाप सकल घट बरते जो जाने सोइ पेखा,
गुरु गम ज्योति अगम घर बासा जो पाया सोइ देखा।
मैं बन्दी हों पर्म तत्त्व की जग जानत की भोरी,
कहत बावरी सुनो हो बीरू, सुरति कमल पर डोरी॥

यह बहुत ही उच्च कोटि की रचना है, जिसका इशारा साधना पद्धति की ओर है। बावरी साहिबा के प्रमुख शिष्य बीरू साहब माने जाते हैं।

स्त्रियों में भी आत्मज्ञान, गुरु बनाने की शर्त और प्रश्न करने की हिम्मत जैसी शक्तियाँ भक्तिकाल की देन है। पुरुषोत्तम अग्रवाल की इस पर सटीक टिप्पणी है कि *भक्तिभाव के बाद न तो ईश्वर वही रह गया जो पहले था, और न ही मनुष्य का आत्मबोध वैसा रह गया, जैसा पहले था। समाज के हाशिए पर फेंक दिए गए लोगों, अछूतों तथा स्त्रियों को तीखे सवाल पूछने का मुहावरा और अपनी खुद की ही नहीं, सारे अस्तित्त्व की समस्याओं*

पर बोलने के लिए शब्द मिल जाएं- यह सिर्फ संयोग नहीं था। सामाजिक शक्तियों की उथल-पुथल को अभिव्यक्त करने वाला मुहावरा चाहे जहाँ से नहीं आ सकता था। वह भक्ति से ही विकसित हो सकता था, क्योंकि यहाँ बहुत विनम्र दृढ़ता के साथ ज्ञान की अवधारणा मात्र का एक समग्र विकल्प प्रस्तुत किया जा रहा था।[12]

सन्दर्भ-

1. *भारतीय चिंतन परम्परा*- के. दामोदरन,पृ. 330
2. *स्त्रीवादी साहित्य विमर्श*- जगदीश्वर चतुर्वेदी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स (प्रा.) लिमिटेड, दिल्ली,पृ.13
3. *स्त्री- कवि-कौमुदी*- ज्योतिप्रसाद मिश्र *निर्मल* गाँधी हिंदी पुस्तक भंडार, प्रयाग, पृ.11
4. *आलोचना* (त्रैमासिक), सहस्राब्दी अंक चार (2000, जनवरी-मार्च), पृ.163
5. *द सेकेंड सेक्स*- *सिमोन द बउवार,* हिंदी पॉकेट बुक्स, दिल्ली(1986),पृ. 67
6. *स्त्रीवादी साहित्य विमर्श*- जगदीश्वर चतुर्वेदी,पृ.29
7. वही,पृ.29
8. *मध्यकालीन संत कवयित्रियाँ*- सावित्री सिन्हा, पृ.169
9. *संत सुधा सार-सं.*- वियोगी हरि, सस्ता साहित्य मंडल,दिल्ली(1986), पृ.861
10. *हिंदी साहित्य:उद्भव और विकास*-हजारीप्रसाद द्विवेदी, पृ.78
11. *तद्भव,सुफी साहित्य:सत्ता, संघर्ष और मिथ,* कमलानंद झा, 2019,अंक-39
12. *विचार का अनंत*-पुरुषोत्तम अग्रवाल, राजकमल प्रकाशन, पृ.125

सम्पर्क -एम.एम. महिला कॉलेज, आरा
(वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, बिहार)
मो. 9136317704